गांधीजी का शिक्षा–दर्शन

डा० अशोक त्रिपाठी
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
एस०डी० (पी०जी०) कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ०प्र०

सारांश

महात्मा गांधी की गणना एक युग पुरूष के रूप में की जाती है। एक महान राजनेता के साथ ही उनमे एक शिक्षाविद के गुण भी थे। वे मानव की भौतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के पक्षधर थे, इसलिए यह आवश्यक था कि एक ऐसी शिक्षा–प्रणाली को अपनाया जाए जो राष्ट्र निर्माण हेतु आत्मनिर्भर, चरित्रवान, दृढ़–संकल्प वाले तथा नैतिक गुणों से परिपूर्ण युवा तैयार कर सकें। बालक पढ़ाई के जीवनोपयोगी हुनर भी सीखें तथा स्वास्थ्य, सफाई, घरेलू चिकित्सा आदि का भी ज्ञान प्राप्त करें। प्रौढ़–शिक्षा तथा स्त्री–शिक्षा, दलितों की शिक्षा पर भी बल दिया गया। 'विद्या वही है जो मुक्त कर दे' जैसे उच्च आदर्श को लेकर उन्होंने 'नई तालीम' को लागू करने का प्रयास किया।

महत्वपूर्ण शब्द

अहिंसक समाज, नयी तालीम, सर्व शिक्षा, पाठ्यक्रम, स्त्री–शिक्षा, प्रौढ़–शिक्षा, आत्मनिर्भरता, चरित्र निर्माण, आध्यात्मिक–नैतिक उन्नति, संस्कृत का ज्ञान, मातृभाषा में शिक्षा आदि।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

डा० अशोक त्रिपाठी,

"गांधीजी का शिक्षा–दर्शन"

शोध मंथन,
सितम्बर 2017,
पेज सं0 170–179
http://anubooks.com/?page_id=581
Artcile No. 24

शिक्षा ही वह साधन है जिसके सहारे मनुष्य अपना शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास कर सकता है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि, ''शिक्षा मनुष्य में निहित पूर्णता का उदय और प्राकट्य है।'' प्रत्येक बालक में अनेक प्रकार की शक्तियाँ विद्यमान रहती हैं तथा इन शक्तियों का वास्तविक विकास शिक्षा अथवा ज्ञान के द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अपनी योग्यता में वृद्धि कर समाज के उत्कर्ष व राष्ट्र–निर्माण लिए अधिक उत्तरदाई सिद्ध हो सकता है। मानव समाज में व्यापत कुरीतियों व कुप्रभावों के विनाश तथा मानव कल्याण का एकमात्र उपाय शिक्षा है। यूनान के महान दार्शनिक सुकरात के अनुसार 'अपने को जानो' ही शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। जो लोग स्वयं को जानते हैं वे अपनी शक्तियों व दुर्बलताओं से भली–भाँति परिचित होते हैं। प्राचीन भारतीय मनीषी कौटिल्य ने ज्ञान को मनुष्य का तीसरा नेत्र कहा है। भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही ज्ञानार्जन पर अत्यधिक बल दिया जाता था। भारत में आने वाले अनेक विदेशी यात्रियों–मेगस्थनीज, इत्सिंग, फाह्यान, व्हेनसांग, अलबरूनी–आदि ने स्वीकार किया है कि सामान्यतया सभी हिंदू विद्या–प्रेमी होते हैं।[1] आधुनिक युग के अनेक अंग्रेज विद्वानों, जो ईस्ट इंडिया कंपनी के नौकर थे, ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि भारत के लोग अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान करने हेतु किसी भी हद तक जा सकते हैं।[2] आधुनिक भारत में अनेक शिक्षा शास्त्री हुए हैं जिन्होंने भारतीय शिक्षा–प्रणाली को गहराई से प्रभावित किया है। उनमें महात्मा गांधी का नाम सर्वोपरि है। गांधीजी का उद्देश्य एक अहिंसक समाज का निर्माण था जहाँ लोग एक साथ मिलजुल कर रहें और एक–दूसरे के सुख–दुःख में एक–दूसरे का साथ दें। इसलिए वे यह मानते थे कि अहिंसा के द्वारा ही छात्र–छात्राएँ भाई–बहन की तरह स्वतंत्र रूप से एक साथ रहते हुए शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।[3] उनका मानना था कि शिक्षा के माध्यम से ही भारत में अहिंसक क्रांति का सूत्रपात हो सकता है।

गांधीजी राजनेता होते हुए भी मौलिक विचारक व एक महान शिक्षा शास्त्री थे। शिक्षा का अर्थ उनके अनुसार था एक पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण। हरिजन के एक अंक में उन्होंने लिखा था, ''शिक्षा से मेरा मतलब है मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क व आत्मा से सर्वोत्तम का बाहर निकालना।[4] गांधीजी शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य मानव जीवन का सर्वतोमुखी विकास मानते थे। गांधीजी शिक्षा और साक्षरता में भेद मानते थे। उनका कहना था कि साक्षर होने का अर्थ शिक्षित होना नहीं है।[5] वे साक्षरता को शिक्षा का एक साधन भर मानते थे तथा कहते थे कि साक्षरता न तो शिक्षा का अंत है न प्रारंभ।[6] अक्षरज्ञान की अपेक्षा संस्कार गांधीजी के लिए अधिक महत्वपूर्ण थे। शरीर, मन तथा आत्मा का विकास ही वास्तविक शिक्षा का लक्ष्य होना चाहिए। शिक्षा को साध्य समझने के बजाय उसे चरित्र बल बढ़ाने का और स्वराज्य के काम का साधन मानना चाहिए।[7] हर प्रकार की शिक्षा का ध्येय आत्मदर्शन होना चाहिए। शिक्षा चरित्र–निर्माण का साधन है। चरित्र–निर्माण पत्थर व गारे से नहीं हो सकता है।[8] वे कहते थे कि शिक्षा का सेतु यदि चरित्र–निर्माण पर आधारित न हो तो उसका होना न होना व्यर्थ है। गांधीजी की मान्यता थी कि शिक्षा के प्रचलित ढाँचे को समाप्त कर एक सच्चे राष्ट्रीय शिक्षा संघ की स्थापना करनी होगी जिसमें भारत की अपनी बुद्धि और प्रतिभा की सम्यक प्रतिष्ठा होगी। वे चाहते थे

कि वृहत्तर भारतीय समाज, जिसमें तथाकथित दलित और वनवासी भी शामिल हैं, में विद्यमान ज्ञान–धाराओं और ज्ञान–ज्योतियों को फिर से प्रतिष्ठित किया जाय और उनके अनुकूल संस्थान बनाए जाँय।[9]

शिक्षा का प्रयोजन केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है अपितु नैतिक, बौद्धिक, चारित्रिक व आध्यात्मिक उन्नति भी है। केवल पुस्तकें पढ़ना एक रोग ही कहा जाएगा। गांधीजी का मानना था कि पढ़ने के साथ–साथ विचार करना भी आवश्यक है। विचार करके जो अच्छा लगे उसे अपनाना चाहिए।[10] बच्चा समस्त इंद्रियों व मन द्वारा अच्छा काम लेना जाने, शुद्ध उच्चारण करे और बिना किसी दबाव के स्वतः पढ़ना–लिखना सीख ले, यही शिक्षा है।[11] बच्चों को राम–नाम, पहाड़ा, संस्कृत के श्लोक तथा आस–पास के नदी–नालों, पहाड़ों, मकानों तथा दिशाओं आदि का ज्ञान कराया जाना चाहिए।[12] दूसरे शब्दों में बालक को अपने क्षेत्र तथा अपने देश के इतिहास व भूगोल से भी भली–भाँति परिचित होना चाहिए। रूसो ने भी लिखा था कि, ''हम तीन स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करते हैं– प्रकृति, मनुष्य व वस्तुओं से।''[13] इहलोक व परलोक दोनों से तादात्म्य स्थापित करना शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य है।

शिक्षा के कुछ तात्कालिक उद्देश्य हैं जिनमें जीविकोपार्जन की समस्या को हल करना प्रमुख है। गांधीजी के अनुसार यदि शिक्षा रोटी, कपड़ा व आवास की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती है तो वह निरर्थक है। शिक्षा का सही उद्देश्य है आत्मज्ञान, सत्य का ज्ञान तथा उसके माध्यम से ईश्वर का ज्ञान। शिक्षा का आवश्यक अंग यह होना चाहिए कि बालक जीवन संग्राम में प्रेम से घृणा को, सत्य से असत्य को और कष्ट–सहन से हिंसा को आसानी के साथ जीत सके।[14] गांधीजी 'साविद्या या विमुक्तये' के सिद्धांत में विश्वास करते हुए विद्याकोमुक्ति का साधन मानते थे। मनुष्य अनेक प्रकार की आर्थिक, समाजिक, राजनीतिक और मानसिक दासता से ग्रस्त है और शिक्षा ही उसे दासता की इन बेड़ियों से मुक्त कर सकती है। अतः लालच की पूर्ति के लिए अथवा धनकमाने के लिए विद्या के दुरुपयोग से बचना चाहिए।[15] स्पष्ट है शिक्षा द्वारा सांसारिक बंधनों से आत्मा की मुक्ति ही उनका लक्ष्य था।

गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में रहते हुए डरबन, जोहानेसबर्ग, फीनीक्स व टालस्टॉय आश्रमों में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किए और यह निष्कर्ष निकाला कि बालकों की शिक्षा में चरित्र का भी योग रहे और बौद्धिक शिक्षा के साथ श्रम भी शिक्षा का मुख्य अंग होना चाहिए। बालक की शिक्षा में चरित्र की महत्ता पर बल दिया जाय। माँ–बाप के पास ही बालक को सच्ची शिक्षा मिल सकती है। शिक्षा के साथ–साथ बालक को कोई हुनर, जैसे दस्तकारी आदि, भी सिखाया जाना चाहिए। मातृभाषा का ज्ञान होना अवश्यक है। 'सादा जीवन व उच्च विचार' उनकी शिक्षा का मूलमंत्र है। बच्चों को प्रताड़ित कर पढ़ाने के वे खिलाफ थे।[16] शिक्षा के साथ हस्तकला–उद्योग पर उन्होंने बहुत बल दिया। उनका कहना था कि भारत जैसे गरीब देश में इससे दोहरा हेतु सिद्ध होगा, एक तरफ तो बालक एक नया हुनर सीखेंगे और दूसरी तरफ उनकी शिक्षा का खर्च निकलेगा। वे चाहें तो बाद के जीवन में वे इस हुनर के जरिए स्वावलम्बी बन सकते हैं।[17] गांधीजी गाँवों में ऐसी शिक्षा व्यवस्था चाहते थे जिसमें बालक पढ़ाई के साथ–साथ कताई, बुनाई, लुहार व बढ़ई का काम, खेती–बारी, स्वास्थ्य, सफाई, घरेलू चिकित्सा

आदि का भी ज्ञान प्राप्त करें।[18] शिक्षा के साथ–साथ बालक की रचनात्मक क्षमता का विकास भी आवश्यक है। व्यायाम करने, शुद्ध रहने तथा स्वावलम्बन का मार्ग अपनाने के लिए बालकों को प्रेरित किया जाना चाहिए। सच्ची शिक्षा वह है जो हमारे भीतर के उत्तम तत्वों को बाहर लाकर प्रकट करती है। गांधीजी के अनुसार मानवता की पुस्तक से बढ़कर दूसरी कौन सी पुस्तक हो सकती है।[19]

संस्कृत भाषा की उपेक्षा गांधीजी को पसंद नहीं थी। संस्कृत भारत की सबसे प्राचीन भाषा है तथा भारतीय भाषाओं की जननी है। अतः गांधीजी का कहना था कि संस्कृत का अध्ययन हिंदुओं व मुसलमानों को समान रूप से करना चाहिए। राम व कृष्ण जैसे अपने पूर्वजों को जानने के लिए संस्कृत का ज्ञान आवश्यक है। जिस भाषा में हमारे पूर्वजों ने चिंतन किया व लिखा, वह भाषा प्रत्येक भारतीय को सीखनी चाहिए।[20] साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि मुसलमानों के साथ संबंध बनाए रखने के लिए उनकी भाषा को जानना हिंदुओं का भी कर्तव्य है। आज हम एक दूसरे की भाषा से दूर भागते हैं क्योंकि हमारी बुद्धि नष्ट हो गई है।[21] गांधीजी साम्प्रदाइक सौहार्द को राष्ट्र की प्रगति के लिए आवश्यक मानते थै इसलिए वे ऐसी राष्ट्रीय शैक्षिक संस्थाओं के पक्षधर थे जो हिंदू–मुस्लिम एकता के संदेशवाहक तैयार करें। उनके अनुसार ऐसी संस्थाएँ नष्ट कर देने योग्य हैं जो कट्टर हिंदू या मुसलमान तैयार करती हैं।[22] गांधीजी का संस्कृत के विषय में कथन है, ''मुझे अपने पूर्वजों की विरासत पर गर्व है जिन्होंने भारत को बौद्धिक वसांस्कृतिक ऊँचाई प्रदान की। आप अतीत के बारे में कैसा अनुभव करते हैं? क्या आपको लगता है कि आप भी इस विरासत में सहभागी और उसके उत्तराधिकारी हैं? क्या उसे देखकर आप के मन में एक अजीब सी गुदगुदी नहीं होती कि हम एक विशाल खजाने के उत्तराधिकारी और संरक्षक हैं।''[23] गांधीजी राजनीतिक व सामाजिक जीवन में उच्चकोटि की नैतिकता आवश्यक मानते थे। धर्म व आध्यात्म उनके लिए बहुत महत्वपूर्ण थे और उनका ज्ञान संस्कृत में रचित शास्त्रों के अध्ययन से ही सम्भवथा। इसलिए उनके अनुसार संस्कृत का ज्ञान प्रत्येक हिंदू बालक के लिए अनिवार्य होना चाहिए।[24]

गांधीजी स्त्रियों व पुरुषों की समानता के समर्थक थे। उन्होंने एक बार कहा था कि यदि मैने स्त्री के रूप में जन्म लिया होता तो मैं पुरुषों के उस दावे को झुठला देता कि नारी केवल पुरुषों के मन बहलाव के लिए पैदा हुइ है। उनका मानना था कि प्रकृति द्वारा अथवा जीव वैज्ञानिक दृष्टि से बनाए गये भेद के अलावा उनमें और कोई भेद नहीं होना चाहिए। नारी को अबला कहना पाप है। नारी सुख–दुःख में पुरुष की सह धर्मिणी है। उसके बिना पुरुष का कोई अस्तित्व नहीं है।[25] उसमें क्षमाशीलता, सत्य व अहिंसा का गुण पुरुषों की अपेक्षा अधिक मात्रा में विद्यमान होता है। वे स्त्री–शिक्षा के पूर्ण समर्थक थे क्योंकि वे मानते थे कि नारी को शिक्षित होकर पुरुष से होड़ नहीं करना है अपितु उसका पूरक बनना है।[26] जो माता–पिता लड़कियों को शिक्षित न कर उन्हें अशिक्षित रखते हैं वे गांधीजी की नजर में अपराधी–तुल्य हैं। महिला सशक्तीकरण के लिए वे तीन बातों को आवश्यक मानते थे– महिला शिक्षा, रोजगार व सामाजिक ढाँचें में बदलाव। इन तीनों में ताल–मेल के बगैर महिला सशक्तीकरण सम्भव नहीं हो सकता।[27]

गांधीजी प्रौढ़ शिक्षा के भी बहुत बड़े हिमायती थे। कांग्रेस की आलोचना करते हुए उन्होने कहा था कि कांग्रेस ने इसकी उपेक्षा की है तथा इस मसले पर समुचित ध्यान नहीं दिया है। यदि मैं प्रौढ़ शिक्षा का इन्चार्ज होता तो देश की विशालता व महानता के प्रति प्रौढ़ शिष्यों के मस्तिृक को खोलने से शुरुआत करता। ग्रामीणों के लिए हिंदुस्तान केवल एक भौगोलिक पद मात्र है। ग्रामीण विदेशी शासन व उसकी बुराइयों से सर्वथा अपरिचित हैं। उन्हें नहीं पता है कि विदेशी शासन का कारण स्वयं उनकी कमजोरियाँ व नादानियाँ हैं। वे नहीं जानत`कि कैसे इससे छुटकारा पाया जा सकता है। अतः मेरे प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ है उनको राजनीतिक रूप से शिक्षित करना। बिना इसके स्वराज की प्राप्ति नहीं हो सकती।[28]

भारत आने के बाद 1920 ई0 में गांधीजी ने गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की तथा शिक्षा के संबंध में उनके प्रयोग जारी रहे। इस प्रकार गांधीजी के प्रारंभिक प्रयोगों ने शिक्षा के लिए बुनियादी या बेसिक सिद्धांतों की नींव रखी। वे एक जिज्ञासु शिक्षक की भाँति सदैव सच्चे ज्ञान की प्रप्ति हेतु प्रयोगरत रहे। गांधीजी एक व्यावहारिक आदर्शवादी थे। विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा शिक्षा–प्रणाली के विषय में उनके विचार आदर्शवाद से प्रेरित हैं। उन्होंने घिसी–पिटी लीक पर शिक्षा देने के स्थान पर बालकों की रुचियों योग्यताओं, नैसर्गिक प्रवृत्तियों को पहचान कर तदनुसार शिक्षा प्रदान करने की बात कही है। गुजरात विद्यापीठ की स्थापान के अवसर पर अपने भाषण में उन्होंने कहा था कि, ''हिंदुस्तान का हर घर एक विद्यापीठ है, महाविद्यालय है, माँ–बाप आचार्य हैं। माँ–बाप ने यह आचार्य का काम छोड़कर अपना धर्म छोड़ दिया है। बाहर की सभ्यता को हमने चुरा लिया है, इससे हिंदुस्तान का भला कैसे हो सकता है?''[29] वास्तविक शिक्षा बच्चों से नहीं अपितु उनके माता–पिता व समुदाय से प्रारम्भ होनी चाहिए। बच्चों के लिए उनका घर शिक्षा व सीखने का पहला केंद्र है। बच्चों की शिक्षा के लिए माता–पिता व अध्यापक के मध्य तालमेल आवश्यक है।[30] वे अपने देश की सभ्यता व संस्कृति को अपनाने पर बल देते थे। असहयोग आंदोलन के दौरान देश में अंग्रेज सरकार द्वारा संचालित स्कूल–कॉलेजों का बहिष्कार किया गया तथा अनेक भारतीय स्कूल–कॉलेजों की स्थापना की गई। इसी क्रम में महात्मा गांधी ने 10 फरवरी, 1921 को बसन्त पंचमी के दिन बनारस में काशी विद्यापीठ का उद्घाटन किया। काशी विद्यापीठ का उद्देश्य पूरी तरह भारतीय परंपरा के अनुसार बिना किसी भेदभाव के सबको समान रूप से शिक्षा प्रदान करना था।[31]

1937 ई0 में वर्धा में गांधीजी की अध्यक्षता में एक अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन संपन्न हुआ जिसमें भारतीय शिक्षा के स्वरूप पर विचार किया गया। यहाँ उपस्थित शिक्षा शास्त्रियों, राजनेताओं और शिक्षा समितियों के प्रतिनिधियों ने मिलकर 7 से 14 वर्ष तक के बालक तथा बालिकाओं के लिए एक आधारभूत राष्ट्रीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की।[32] बच्चों की यह अवस्था उनके विकास की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। इस शिक्षा–पद्धति को 'बेसिक शिक्षा' अथवा 'बुनियादी' शिक्षा का नाम दिया गया। बुनियादी शिक्षा के पाँच आधारभूत सिद्धांतों पर ही गांधीवादी शिक्षा–दर्शन की आधारशिला अवस्थित है। ये सिद्धांत हैं– (1) सात वर्षों की निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा (2) मातृभाषा द्वारा शिक्षा (3) किसी मूल उद्योग के आधार पर शिक्षा (4) समवायी शिक्षा और (5) स्वावलम्बी शिक्षा। बुनियादी पद्धति बालकों की समस्याओं को

सुलझाने का प्रयास करती है, उनकी कल्पनाशीलता का विकास करती है, उनको अनुभव प्रदान करने के साथ–साथ उनके शैक्षणिक स्तर को सुदृढ़ बनाती है। गांधीजी का कहना था कि उच्च शिक्षा के प्रश्न को कुछ दिनों के लिए टाला जा सकता है पर प्राथमिक शिक्षा की समस्या को एक क्षण के लिए भी नहीं टाला जा सकता है।[33] अच्छी शिक्षा ही महान व्यक्तियों का निर्माण करती है। बेसिक शिक्षा में किसी भी विषय की शिक्षा तीन माध्यमों से दी जाती है– हस्त कार्य, प्रकृति का निरीक्षण व कोई सामाजिक कार्य।

वर्धा में शिक्षा संबंधी अपना मत प्रकट करते हुए गांधीजी ने अंग्रेजी शिक्षा–पद्धति का विरोध किया और कहा कि अंग्रेजी पढ़–लिख कर लोग स्वयं को आम भारतीय से अलग व उत्कृष्ट समझने लगते हैं। गांधीजी की दृष्टि में शिक्षित व्यक्ति वह है जो आत्मोन्नति के साथ–साथ समाज के विकास व राष्ट्र उत्थान के लिए भी प्रयास करे।[34] उनके अनुसार अंग्रेजी शिक्षा–पद्धति पुस्तक–प्रधान और साहित्यिक है तथा जीवन की वास्तविकता से बहुत दूर है। इसमें विषयों का मौखिक वर्णन होता है तथा इसमें व्यावहारिक कुशलता व सामाजिक निपुणता का अभाव है। उनका मानना था कि स्कूल व कॉलेज सरकार के लिए क्लर्क तैयार करने वाले कारखानों में परिवर्तित हो गये हैं।[35] अपने अनुभवों से गांधीजी ने निष्कर्ष निकाला था कि अंग्रेजी शिक्षा के कारण शिक्षितों व अशिक्षितों के बीच कोई सहानुभूति, कोई संवाद नहीं है। शिक्षित समुदाय अशिक्षित समुदाय के दिल की धड़कन को महसूस करने में असमर्थ है।[36] हिंद स्वराज में भी उन्होंने उल्लेख किया है कि, ''करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी। उसने इसी इरादे से अपनी योजना बनाई थी, ऐसा मैं नहीं सुझाना चाहता, लेकिन उसके काम का नतीजा यही निकला है। यह कितने दुख की बात है कि हम स्वराज की बात भी पराई भाषा में करते हैं।''[37] बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में 4 फरवरी 1916 को अपने एक भाषण के दौरान देशी भाषाओं के प्रयोग पर बल देते हुए गांधीजी ने कहा था, ''हमारी भाषा हमारा प्रतिबिंब है और यदि आप कहेंगे कि हमारी भाषाएँ सर्वोत्तम विचारों को प्रकट करने में असमर्थ हैं तो मैं कहूँगा कि शीघ्र ही हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। क्या कोई व्यक्ति ऐसा है जो अंग्रेजी को भारत की राष्ट्रभाषा बनने का स्वप्न देखता है?''[38] वर्धा में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का प्रस्ताव दिया गया क्योंकि इससे बालक के सहज विकास व निर्बाध ज्ञान प्रप्ति में सहायता मिलती है। मातृभाषा द्वारा प्रदत्त ज्ञान स्थाई व ठोस होता है। मातृभाषा का कोई विकल्प नहीं है तथा इसका संबंध बालक के जीवन से अत्यंत गहरा होता है। अनेक भाषाओं का जानकार होने पर भी कोई व्यक्ति अपनी मातृभाषा के संस्कार से आजीवन मुक्त नहीं हो पाता है।

गांधीजी सत्य व अहिंसा जैसे बुनियादी सिद्धांतों पर आधारित शिक्षा–प्रणाली के माध्यम से एक शोषण–मुक्त समाज का निर्माण करना चाहते थे। हिंद स्वराज में गांधीजी एक अंग्रेज विद्वान हक्सले को उद्धृत करते हुए कहते हैं, ''उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके बस में रहता है, जिसका शरीर चैन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है जिसकी बुद्धि शुद्ध, शांत और न्यायदर्शी है। उसने सच्ची शिक्षा पाई है जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा

है और जिसकी इंद्रियाँ उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनाएँ बिलकुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है व जो दूसरों को अपने जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित माना जाएगा क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।''[39]

जहाँ तक उच्च शिक्षा का प्रश्न है गांधीजी का कहना था कि उच्च शिक्षा का नीति–निर्धारण राष्ट्रीय आवश्यकता को ध्यान में रख कर होना चाहिए। ऐसे महाविद्यालयों का निर्माण होना चाहिए जिनमें राष्ट्रीय अपेक्षाओं के अनुरूप शिक्षण व प्रशिक्षण की व्यवस्था हो। उच्च शिक्षा में विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण व अनुशासन पर बल देना चाहिए और इसके लिए उनको कड़ाई से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। चरित्र के नाश से सबकुछ नष्ट हो जायेगा।[40] गांधीजी की सलाह थी कि हमारे विद्यालयों व महाविद्यालयों को आत्मनिर्भर व स्वावलम्बी होना चाहिए जिससे वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लोगों के दान तथा राज्य सरकारों के अनुदान पर निर्भर न रहें। वे अमेरिका का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि अमेरिका अपने विद्यार्थियों को इस प्रकार तैयार करता है कि वे अपनी पढ़ाई का खर्च हर हालत में स्वयं निकाल लेते हैं।[41] गांधीजी विश्वविद्यालयों को स्वराज के संघर्ष का प्रशिक्षण केंद्र मानते थे। उच्च शिक्षा, गांधीजी के अनुसार, एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए आवश्यक है। उन्होंने उच्च शिक्षा में स्वदेशी संस्कृति, आध्यात्मिक विकास, क्षेत्रीय भाषाओं, हस्त श्रम व महिला स्वाधीनता पर बल दिया। उनके अनुसार यदि हम व्यक्तियों के चरित्र–निर्माण में सफल होते हैं तो समाज स्वयं अपना ध्यान रखने में समर्थ होगा।[42] उ़च्च शिक्षा के द्वारा हमें इंजीनियरों, केमिस्टों तथा विशेषज्ञों की फौज का निर्माण करना चाहिए जो राष्ट्र के सच्चे सेवक होने के साथ–साथ अपने अधिकारों के प्रति सचेत लोगों की बढ़ती हुई आवश्यकताओं का प्रत्युत्तर दे सकें। ये सभी विशेषज्ञ विदेशी भाषा में संवाद न कर आम आदमी की भाषा में बात करेंगे। उनके द्वारा अर्जित ज्ञान पर सभी लोगों का समान अधिकार होगा। हमें नकल के स्थान पर मौलिक कार्य के दर्शन होंगे।[43] गांधीजी के अनुसार विश्वविद्यालयों को आत्मनिर्भर परीक्षा निकाय के रूपमें कार्य करना चाहिए। उनका कार्य शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र का ध्यान रखना, पाठ्यक्रम तैयार करना तथा उनका अनुमोदन करना होना चाहिए। केवल राष्ट्र को एक केंद्रीय शिक्षा विभाग की व्यवस्था करनी चाहिए। उनके अनुसार विश्वविद्यालयों को शानदार भवन व सोने–चाँदी के खजाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।[44]

शिक्षक ही समाज के वास्तविक शिल्पी होते हैं। एक विकसित, समृद्ध व खुशहाल राष्ट्र के निर्माण मे ंवहाँ के योग्य व आदर्श शिक्षकों की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। शिक्षक ही संपूर्ण शिक्षा–प्रणाली का केंद्र बिंदु या कहें तो मेरुदण्ड होता है और शिक्षा प्रणाली की सफलता व विफलता शिक्षक समुदाय पर निर्भर होती है। एक शिक्षक यदि ईमानदारी, निष्ठा व लगन से काम करता है तो विद्यार्थियों का चहुँमुखी विकास होगा और वे देश व समाज के लिए अधिकाधिक उपयोगी बनेंगे। एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि गांधीजी शिक्षण कार्य को एक व्यवसाय के रूप में नहीं पसन्द करते थे। वे प्राचीन भारत के शिक्षकों का उदाहरण देते हैं जो केवल प्रेम समर्पण व सेवा भाव के कारण अध्यापन करते थे। गांधीजी का

कहना था कि शिक्षकों का मूल्य वेतन से नहीं आँका जाना चाहिए और शिक्षक भी वेतन को गौण समझते हुए शिक्षा को ही अपना मुख्य कर्तव्य समझें। स्कूलों में नई जान तभी आ सकती है जब शिक्षक अपने कर्तव्य के प्रति सचेत होंगे।[45] गांधीजी ने एक और बड़ी महत्वपूर्ण बात के लिए शिक्षकों को निर्देश दिया कि वे विद्या–दान में जाति व पंथ के आधार पर विद्यार्थियों से भेदभाव न करें। उनका कहना था कि यह शिक्षकों की कसौटी है कि वे अपनी कक्षा में अछूतों को जरूर खींच लाएँ, चाहे इससे पाठशाला ही क्यों न टूट जाय।[46] कोई भी पाठशाला जो अछूतों का बहिष्कार करेगी वह गांधीजी को मान्य नहीं थी। उनका कहना था कि क्या हम अस्पृश्यता का पुनरुद्धार करके स्वराज्य प्राप्त करने की आशा रखते हैं? एक लेख में उन्होंने लिखा था कि रेलगाड़ी में, होटलों में, अदालतों में, मिलों में अस्पृश्यता आड़े नहीं आती तो क्या स्कूलों में ही अस्पृश्यता कायम रखी जायगी?[47] उनका कहना था कि अस्पृश्यता अधर्म है तथा हिंदू धर्म में निहित बुराइयों की परिसीमा है। इसका पोषण करना दुराग्रह है।[48]

आधुनिक युग में शिक्षा–दर्शन पर गांधीवाद का गहरा प्रभाव है जिसके फलस्वरूप एक नई शिक्षा प्रणाली का जन्म हुआ जिसे 'नई तालीम' कहा गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारतीय शिक्षा प्रणाली को दुरुस्त करने के लिए अनेक आयोगों का गठन हुआ तथा गांधीजी के विचारों को सर्वत्र स्थान दिया गया। गांधीजी के सत्य, अहिंसा व प्रेम के सिद्धांतों को अपनाते हुए बालक–बालिकाओं को शिक्षित किया जा रहा है। आज हमारी शिक्षा प्रणाली में स्वावलंबन, श्रम–निष्ठा, सभी धर्मों के प्रति आदर भाव पर बल दिया गया है। जाति–वर्ग–धन–शक्ति आदि की कृत्रिम सीमाओं से बाहर निकलकर मानव मात्र के सर्वंगीण विकास को ही शिक्षा का मूलमंत्र माना गया है। सर्वोदय समाज की स्थापना ही हमारी आधुनिक शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है।

संदर्भ

1. देवेन्द्र स्वरूप (सं0) – 'राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन का इतिहास', (प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, 2007) में रामस्वरूप का लेख – 'ब्रिटिश पूर्व भारत में शिक्षा व्यवस्था', पृष्ठ – 25
2. वही, पृष्ठ – 25
3. पटेल, एम0 एस0 – 'द एजुकेशनल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गांधी', (नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1958), पृष्ठ – 102
4. हरिजन, 8–5–1937
5. यंग इंडिया, 12–31–1925
6. हरिजन, 31–7–37
7. नवजीवन, 21–12–1924
8. महादेव देसाई – 'विद गांधीजी इन सिलोन', (मद्रास, 1928), पृष्ठ 89
9. 'पंकज' मिश्र, रामेश्वर – 'गांधीजी की विश्व दृष्टि', (विचार प्रकाशन, दिल्ली, 1992), पृष्ठ 62
10. कोचर, संगीता – 'माय लाइफ माय वर्डसः रिमेंबरिंग महात्मा गांधी'', (नटराज पब्लिशर्स, नई दिल्ली), पृष्ठ 90

11. वही, पृष्ठ 63
12. सुमन, रामनाथ – 'शिक्षण और संस्कृति', (गांधी स्मारक निधि, वाराणसी), पृष्ठ 113–115
13. सिन्हा, डा0 राम कृपाल – ''एम0के0 गांधीः सोर्सेज, आइडियाज ऐंड ऐक्शंस', (ओसिन बुक्स प्रा0लि0, नई दिल्ली), पृष्ठ 199
14. गांधी विचार रत्न (सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली)
15. वही
16. वर्मा, वैद्यनाथ प्रसाद – 'विश्व के महान शिक्षाशास्त्री', (बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1972), पृष्ठ 474–480
17. यंग इंडिया, 1–6–1926
18. 'पंकज' मिश्र, रामेश्वर – पूर्वोक्त, पृष्ठ 63
19. हरिजन, 30–3–1934
20. नवजीवन, 23–3–1927
21. संपूर्ण गांधी वांगमय, खण्ड 33, पृष्ठ 185
22. नवजीवन, 27/03/1927
23. संपूर्ण गांधी वांगमय, खण्ड 33, पृष्ठ 185
24. संपूर्ण गांधी वांगमय, खण्ड 13, पृष्ठ 360
25. यंग इंडिया, 10/4/1930, पृष्ठ – 121
26. हरिजन, 27/02/1937, पृष्ठ – 19
27. बर्मन, पिंकूमणि – 'गांधी ऐंड हिज वीजन फॉर वुमन एम्पावरमेंट', आई0जे0सी0ए0ई0एस0, वाल्यूम 3, जनवरी 2013, पृष्ठ 42
28. गांधी, एम0 के0 – 'कंस्ट्रक्ट्रि प्रोग्रामः इट्स मीनिंग ऐंड प्लेस', (नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1948), पृष्ठ – 16
29. वर्मा, वैद्यनाथ प्रसाद – 'विश्व के महान शिक्षाशास्त्री', पृष्ठ 602
30. सेनगुप्त, मंजीत – प्रारंभिक बाल्यावस्थाः देखभाल और शिक्षा, (पी0एच0आई0 लर्निंग प्रा0लि0, दिल्ली, 2013), पृष्ठ – 23
31. देवेन्द्र स्वरूप (सं0) – 'राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन का इतिहास', (प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, 2007) में शंकर शरण श्रीवास्तव का लेख – 'काशी विद्यापीठ', पृष्ठ – 212
32. पटेल, एम0 एस0 – 'द एजुकेशनल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गांधी', पृष्ठ – 124
33. एजूकेशनल रिकंस्ट्रन : ए कलेक्शन ऑव गांधीज एसेज़ (हिंदुस्तान तालीमी संघ, वर्धा, 1939), पृष्ठ – 96
34. पांडेय, श्रुतिकान्त – 'हिंदी भाषा और इसकी शिक्षण विधियाँ', (पी0एच0आई0 लर्निंग प्र0लि0, दिल्ली), पृष्ठ 106

35. यंग इंडिया, 15–9–1920
36. सुमन, रामनाथ – 'शिक्षण और संस्कृति', पृष्ठ 164
37. हिंद स्वराज, पृष्ठ 129
38. भारद्वाज, डा0 रमेश – 'हिस्टोरिक स्पीचेज ऑफ महात्मा गांधी', (गांधी समाधि, नई दिल्ली), 2006
39. गांधी, मोहनदास करमचंद – 'हिंद स्वराज', पृष्ठ 125
40. वर्मा, एम0 व सोनी, रश्मि . 'यूनिवर्सिटी एजुकेशन ऐज ड्रीम्ट बाई गांधी', गांधी मार्ग (अंग्रेजी), भाग 27, अक्टूबर–दिसंबर 2005 और जनवरी–मार्च 2006, (गांधी पीस फाउंडेशन, नई दिल्ली), पृष्ठ 315
41. सिन्हा, डा0 राम कृपाल – ''एम0के0 गांधीः सोर्सेज, आइडियाज ऐंड ऐक्शंस', पृष्ठ 202
42. वही, पृष्ठ 321
43. नकाड़े, शिवराज – 'रेलेवेंस ऑफ महात्मा गांधीजी फिलॉसफी', देखिए अनिल दत्त मिश्र संपा0 'रीडिस्कवरिंग गांधी', (मित्तल पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, 2002), पृष्ठ 11
44. सिन्हा, डा0 राम कष्पाल – पूर्वोक्त, पृष्ठ 203
45. नवजीवन, 10/8/1924
46. वही
47. नवजीवन, 21/11/1920
48. नवजीवन, 21/11/1920